भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)
दण्डकारण्य स्पेशल जोनल कमेटी
प्रेस विज्ञप्ति

5 जून 2013

शुभ्रांशु चौधरी की टिप्पणियां
माओवादी संघर्ष को नीचा दिखाने के प्रयासों का हिस्सा ही हैं!

25 मई को छत्तीसगढ़ के झीरमघाटी के पास पीएलजीए द्वारा किए गए हमले के बाद, जिसमें महेंद्र कर्मा, नंदकुमार पटेल समेत कुछ अन्य लोग मारे गए थे, पत्रकार शुभ्रांशु चौधरी ने बीबीसी हिन्दी डॉट कॉम के लिए एक लेख लिखा है जिसका शीर्षक था – 'मास्टर के हाथ नक्सलियों की कमान?', जिसे कई अन्य मीडिया संस्थाओं ने भी प्रकाशित व प्रसारित किया। इसमें उन्होंने इस हमले से हमारी पार्टी की दण्डकारण्य इकाई के नेतृत्व में हुए परिवर्तन को जोड़ने का प्रयास किया। उन्होंने यह दिखाने की कोशिश की कि कामरेड कोसा की जगह पर कामरेड रामन्ना के सचिव चुने जाने पर अब हिंसात्मक कार्रवाइयों पर ज्यादा जोर दिया जाएगा। अपने इस मनगढ़ंत विश्लेषण को सही ठहराने के लिए उन्होंने आगे यह लिखा कि 'रामन्ना कोसा जैसे नेताओं को पसंद नहीं करते हैं'। हमारी दण्डकारण्य स्पेशल जोनल कमेटी मानती है कि ये सब कोरी बकवास के अलावा कुछ नहीं हैं। इस संदर्भ में कामरेड रामन्ना के साथ हुई अपनी कथित बातचीत का हवाला देते हुए उन्होंने कई आपत्तिजनक बातें लिखीं। हमारी कमेटी शुभ्रांशु की इन भद्दी टिप्पणियों की कड़ी निंदा करती है।

शोषणकारी राजसत्ता हमारी पार्टी के नेतृत्व में जारी क्रांतिकारी आंदोलन का सफाया करने के लिए आज एक भारी दमनात्मक युद्ध चला रही है, जिसका एक महत्वपूर्ण अंग है मनोवैज्ञानिक युद्ध। इसके तहत मीडिया के जरिए और कई अन्य साधनों से झूठों, मनगढ़ंत कहानियों और अफवाहों को फैलाया जा रहा है। इसमें नेतृत्व को खासतौर पर निशाना बनाया जा रहा है। नेतृत्व के बीच मतभेद व मनमुटाव होने का दुष्प्रचार भी बड़े पैमाने पर किया जा रहा है ताकि जनता को गुमराह किया जा सके। हमें लगता है कि जाने या अनजाने में शुभ्रांशु चौधरी भी इसका हिस्सा बन गए हैं।

उसके बाद 1 जून को बीबीसी रेडियो के साप्ताहिक कार्यक्रम 'इंडिया बोल' में भाग लेते हुए शुभ्रांशु ने हमारे आंदोलन के संदर्भ में कुछ और टिप्पणियां कीं। उनका कहना है कि माओवादियों का राजनीतिक लक्ष्य और उनके नेतृत्व में लड़ रहे आदिवासियों के मुद्दे दोनों अलग–अलग हैं। बकौल उनके, ''कुछ लोग माओवाद के नाम पर दुनिया में राजनीति को बदलना चाहते हैं। और अधिक लोग... जिनको आप आदिवासी कहते हैं, जिनको हम पैदल सेना कहते हैं, वे उनके साथ इसलिए जुड़ते हैं क्योंकि आज की इस व्यवस्था से उनको न्याय नहीं मिलता है... माओवादी लाल किले में लाल झण्डा फहराना चाहते हैं। माओवादियों की लड़ाई जंगल और जमीन की लड़ाई नहीं है।... वे इस दुनिया में समाजवाद और उसके बाद साम्यवाद लाना चाहते हैं....'' आदि–आदि।

गौरतलब है कि शुभ्रांशु चौधरी ने माओवादी आंदोलन के बारे में हाल ही में एक किताब लिखी है जिसका नाम 'लेट्ज़ काल हिम वासु' – हिंदी में 'उसका नाम वासु नहीं' है। लेकिन अफसोस की बात यह है कि अपनी किताब में माओवादियों के साथ सात साल संपर्क रखने का दावा करने वाले शुभ्रांशु ने हमारे आंदोलन को गहराई से समझने की कभी गंभीर कोशिश की ही नहीं। उन्होंने वर्ग संघर्ष के बुनियादी नियमों तक को समझने की कोशिश नहीं की। आदिवासियों के तमाम संघर्ष, चाहे वे माओवादियों के नेतृत्व में चलें या उसके बगैर, राजसत्ता के खिलाफ जारी वर्ग संघर्ष का हिस्सा ही हैं। इसमें दो राय नहीं कि लम्बे परिप्रेक्ष्य से या अंतिम तौर पर भाकपा (माओवादी) का मकसद राज्यसत्ता को छीन लेना है जिसके बगैर हम अपने देश के लोगों को साम्राज्यवाद, सामंतवाद और दलाल नौकरशाह बुर्जुआ की जकड़ से मुक्ति नहीं दिला सकते, यानी मौजूदा अन्यायपूर्ण सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था को नहीं बदल सकते। और कम्युनिस्टों ने, यहां तक कि कार्ल मार्क्स ने भी, सशस्त्र क्रांति के जरिए राजसत्ता पर कब्जा करने और समाजवाद व साम्यवाद की स्थापना करने का महज 'सपना' नहीं देखा था। वह मजदूर वर्ग समेत तमाम शोषित वर्गों की समस्याओं तथा समाज की आर्थिक, राजनीतिक व सामाजिक परिस्थितियों और तमाम वर्ग संघर्षों के समग्र और वैज्ञानिक विश्लेषण का निचोड़ है। मौजूदा राजसत्ता को उखाड़ फेंककर मजदूर–किसानों की एकता के आधार पर चार वर्गों के संयुक्त मोर्चा – जिसमें मध्यम और निम्न पूंजीपति वर्ग भी शामिल हैं – द्वारा राजसत्ता पर कब्जा करने की राजनीतिक रणनीति भारतीय समाज के ठोस और समग्र विश्लेषण के आधार पर तैयार हुई है, न कि चंद लोगों की दिमागी कल्पनाओं से। यह हमारी पार्टी का फौरी कार्यक्रम है जिसे हम नई जनवादी क्रांति कहते हैं।

भारत के अर्द्धसामंती और अर्द्धउपनिवेशी समाज में मजदूरों, किसानों, कर्मचारियों, छोटे व मध्यम पूंजीपतियों आदि शोषित वर्गों तथा आदिवासियों, दलितों, धार्मिक अल्पसंख्यकों, महिलाओं आदि उत्पीड़ित तबकों की तमाम बुनियादी समस्याओं का स्थाई समाधान तभी हो सकता है जब इस व्यवस्था को जड़ से बदला जाएगा और शोषित वर्गों की जनवादी राजसत्ता स्थापित की जाएगी। और इस क्रांतिकारी प्रक्रिया की हमारी पार्टी अगुवाई कर रही है।

इसी लक्ष्य से हमारी पार्टी भाकपा (माओवादी) पिछले कई दशकों से तमाम शोषित जनता को संगठित कर रही है जिसमें आदिवासी एक मुख्य हिस्सा हैं। जनता के हित ही पार्टी के हित हैं। जल–जंगल–जमीन समेत जनता की रोजमर्रा की सारी समस्याओं को लेकर वह जन संघर्षों का निर्माण कर रही है और शोषित जनता को विभिन्न जन संगठनों में गोलबंद कर रही है। इतिहास पर नजर डालें तो विश्व में अब तक हुई कोई भी क्रांति जनता के रोजमर्रा के मुद्दों से अछूती नहीं रही। बल्कि जनता की आकांक्षाओं और जरूरतों की सही अभिव्यक्ति के रूप में ही क्रांतियां सफल हो पाईं। 1917 की रूसी क्रांति 'शांति और रोटी' के नारे से सफल हुई थी। उसी तरह भारत में भी जल–जंगल–जमीन का मुद्दा कृषि क्रांति का हिस्सा है जो नई जनवादी क्रांति की धुरी है। लेकिन माओवादी आंदोलन में शामिल आदिवासियों और आंदोलन के नेतृत्व के बीच शुभ्रांशु कृत्रिम तरीके से विभाजन करके उनके लक्ष्यों को अलग–अलग दिखाने की नाकाम कोशिश कर रहे हैं। माओवादी आंदोलन में भागीदार आदिवासियों को 'पैदल सेना' की संज्ञा देना भी उनकी तंग मानसिकता का ही परिचायक है।

शुभ्रांशु यह नहीं समझ पा रहे हैं कि आदिवासियों ने किन्हीं दूसरों के 'राजनीतिक लक्ष्य' के तहत नहीं, बल्कि अपनी मुक्ति के लिए यह लड़ाई लड़ रहे हैं। देश के इतिहास में आज तक जहां कहीं भी आदिवासियों के संघर्ष या विद्रोह हुए, उनका सम्बन्ध किसी न किसी रूप में जल–जंगल–जमीन से जुड़ा ही रहा। और जल–जंगल–जमीन के मुद्दे का सीधा सम्बन्ध राजसत्ता से है। औपनिवेशिक दौर में आदिवासियों ने, जिनको शुभ्रांशु 'पैदल सेना' कहकर पुकार रहे हैं, अंग्रेजों के खिलाफ दर्जनों बार विद्रोह किया था। लेकिन अगर कोई यह कहेगा कि उन आदिवासियों के मुद्दे अलग थे और भारत की आजादी का लक्ष्य अलग था, उस पर हंसा ही जा सकता है। दरअसल आदिवासियों को लेकर शुभ्रांशु का नजरिया ही बुरी तरह गड़बड़ है। शुभ्रांशु आदिवासियों के मुद्दों की बात तो कर रहे हैं, लेकिन उन्हें पता ही नहीं कि उनका हल कैसे हो सकता है। वे इस सच्चाई को समझ ही नहीं पा रहे हैं कि आदिवासियों को जल–जंगल–जमीन पर अधिकार या शुभ्रांशु के मुताबिक 'न्याय' तब तक नहीं मिलने वाला है जब तक कि राजसत्ता पर सामंतशाहों और दलाल पूंजीपतियों का कब्जा रहेगा जिन्हें साम्राज्यवादियों का समर्थन प्राप्त है। आज देश भर में, खासकर आदिवासी इलाकों में खदानों, बड़े बांधों, भारी उद्योगों, एक्सप्रेस हाइवे, अभयारण्य और सैन्य छावनियों के निर्माण की परियोजनाओं से करोड़ों लोगों का विस्थापन किया जा रहा है। इस कार्पोरेट लूटखसोट, जिसने उन्हें जीवन–मरण के संघर्ष में धकेल दिया, के साथ मौजूदा व्यवस्था और उसके द्वारा लागू नवउदार नीतियों के सम्बन्ध को भी वे समझ नहीं पा रहे हैं। या फिर शायद वे इस भ्रम में होंगे कि मौजूदा शोषणकारी और पीड़ादायक व्यवस्था को बरकरार रखते हुए ही कुछेक 'बैंड–एइड सोल्यूशन्स' के जरिए लोगों के मुद्दों का हल किया जा सकता है या किया जाना चाहिए।

आज दण्डकारण्य में, देश के विभिन्न हिस्सों में आदिवासी अगर माओवादी आंदोलन में संगठित हो गए हैं, तो यह नहीं भूलना चाहिए कि उन्हें हमारी पार्टी द्वारा शुरू से ही राजसत्ता छीनने के लक्ष्य से प्रेरित किया गया था। शुरू से ही उनके तमाम संघर्षों में केन्द्र बिंदु के तौर पर राजसत्ता का सवाल ही रहा। आज यहां क्रांतिकारी जनताना सरकार का निर्माण भी हुआ है जोकि जनता की जनवादी राजसत्ता का भ्रूण रूप है। भले ही उनमें से बहुतेरे ने रायपुर, दिल्ली जैसे शहरों को नहीं देखा हो, जैसा कि शुभ्रांशु ने अपनी किताब में कई बार अप्रसन्नता भरे अंदाज में कहा, लेकिन इतना तो समझ ही गए हैं कि पिछले पैंसठ सालों में दिल्ली और रायपुर ने उनके साथ क्या किया था और उन्हें क्या दिया था। और लाल क़िले पर लाल झण्डा फहराना भी सिर्फ भाकपा (माओवादी) का सपना नहीं है जैसा कि शुभ्रांशु कह रहे हैं। यह भारत के तमाम शोषित, उत्पीड़ित व मेहनतकश जन समुदायों का दशकों पुराना सपना है क्योंकि उन्हें पता है कि तभी उन्हें रोटी, कपड़ा और मकान के साथ–साथ इज्जत के साथ जीने के अधिकार की गारंटी मिल सकती है।

चलते–चलते उनकी उपरोक्त किताब पर हमारी कमेटी संक्षेप में कुछ टिप्पणियां करना चाहती है। यह किताब ढेर सारे झूठों, बहुत से अर्द्ध सत्यों और थोड़े–बहुत तथ्यों का पुलिंदा भर है। तथ्यों को भी उन्होंने काफी हद तक तोड़–मरोड़कर ही पेश किया। उसमें दिए गए कई अंश सफेद झूठ तो हैं ही, खासकर डाक्टर बिनायक सेन प्रकरण पर, जीत और मुक्ति के साथ हमारी पार्टी के कथित सम्बन्धों के बारे में और एस्सार कम्पनी से पैसा लेने के मामले में – इन तीन मुद्दों पर उन्होंने जो कुछ लिखा उसका हमारी कमेटी कड़े शब्दों में खण्डन करती है। हमें लगता है कि इस तरह वही आदमी लिख सकता है जो जनवादी और क्रांतिकारी आंदोलनों को और उन आंदोलनों के शुभचिंतकों को नुकसान पहुंचाना चाहता हो; जो उन आंदोलनों का दमन कर रही राजसत्ता के पक्ष में खड़े रहना चाहता हो।

Gudsa Usendi

(गुड्सा उसेण्डी)
प्रवक्ता
दण्डकारण्य स्पेशल जोनल कमेटी
भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)